भुल्लर की फांसी और सन 84 के सिख विरोधी दंगे

लोकतंत्र में पृथक संगठन बनाना किसी भी तरह प्रशंसनीय कार्य नहीं है। परिवार, गॉव, जिला, प्रदेश, देश आदि समाज स्वीकृत संगठन स्वतः ही बने हुए हैं। आप यदि इनसे कुछ भिन्न करना चाहते हैं तो संस्था बनाना एक अच्छा कार्य है। फिर अलग से कोई संगठन बनाने की क्यों आवश्यकता है? फिर भी, अनाश्यक होते हुए भी संविधान ने आपको संगठन बनाने की कुछ शर्तों के साथ छूट दी हुई है। यह पूरी तरह सच है कि संगठन व्यवस्था को ब्लैकमेल करते ही हैं। आज तक दुनिया में काई संगठन ऐसा नहीं बना जिसने ब्लैकमेल करने का प्रयास न किया हो। भारत में तो संगठन बनाना तथा ब्लैकमेल करना एक सामान्य कार्य की तरह माना जाता है। व्यवस्था का कर्तव्य होता है कि वह संगठनों पर विशेष नजर रखे तथा उन्हें प्रारंभ से ही ऐसा अनुशासित रखे कि वे संविधान द्वारा दी गई इस विशेष सुविधा का कभी दुरूपयोग न कर सकें। किन्तु आम तौर पर राजनैतिक संगठन अपने अपने स्वार्थ के लिये ऐसे संगठनों को कभी कभी बढ़ावा देते हैं और जब अति हो जाती है तब मजबूर होकर समाज को अलोकतांत्रिक अमानवीय पहल करनी पड़ती है। ऐसी पहल समाज के लिये एक दुखद इतिहास बन जाती है। यदि किसी छोटे बच्चे की आदत पड़ जाये कि रोने वाले बच्चे को मॉ अन्य बच्चों की अपेक्षा अधिक दूध पिलाती है और वह चालाक बच्चा अति कर दे तो न चाहते हुए भी मॉ उस बच्चे को एकाध बार कस के झापड़ मार कर चुप कराती है जिससे उस बच्चे की आदत छूट जाये।

वैसे तो भारत में हजारों संगठन बने हुए हैं किन्तु हम यहॉ धर्म आधारित संगठनों की ही चर्चा करेंगे। ऐसे संगठनों में इस्लाम, सिख तथा शिवसेना सहित संघ परिवार प्रमुख हैं। हम यहॉ आपको स्पष्ट कर दें कि संघ परिवार रहित हिन्दू या तो धर्म कहा जा सकता है या समाज, किन्तु वह किसी भी रूप में संगठन नहीं कहा जा सकता।

सिख विरोधी सन् चौरासी के दंगे तथा गुजरात के दंगे उल्लेखनीय हैं। स्वतंत्रता के बाद सिखों ने अनावश्यक रूप से स्वयं को संगठन क रूप में बनाये रखा । उन्हें धर्म के रूप में स्वयं को बदल लेना चाहिये था। कांग्रेस पार्टी को पंजाब की राजनीति के लिये ऐसे संगठन को सशक्त करने की आवश्यकता थी। कांग्रेस पार्टी ने लगातार संगठित सिखों की मनमानी चलने दी। सारी दुनिया जानती है कि भिंडरावाले कांग्रेस द्वारा ही पाल पोसकर बडा किये हुए थे। जब भिन्डरावाले बिल्कुल ही समस्या के रूप में खड़े हो गये तो मजबूर होकर सरकार को कठोर कदम उठाने पड़े। संगठित सिखों ने सरकार की मजबूरी से सबक न सीखते हुए आतंकवाद का सहारा लिया । असंगठित सिख तो पहले से ही कमजोर थे तथा नाम मात्र के थे किन्तु संगठित सिख चुप रहने के बाद भी आतंकवाद के समक्ष तटस्थ हो गये या आंशिक रूप से आतंकवाद के प्रति सहानुभूति रखने लगे। यहॉ तक कि कुछ सिखों ने भिन्डरा वाले को महिमा पंडित भी करने का प्रयत्न किया जिसका किसी मजबूत सिख संगठन ने खुलकर विरोध नहीं किया। स्पष्ट था कि सम्पूर्ण समाज सिखों की उच्श्रृंखलता से तंग हो चुका था। सम्पूर्ण समाज में आम सिखों के विरूद्ध आक्रोश का भाव था। सम्पूर्ण समाज में सिखों के मामले में धर्म, जाति, उम्र आदि की दीवारे तो टूट ही चुकी थी , यहां तक कि राजनीति की दीवारे भी टूट रही थी। ऐसे समय मे इंदिरा गांधी की हत्या ने वर्षो से भीतर भीतर सुलग रहे ज्वालामुखी को ब्लास्ट कर दिया। उस ब्लास्ट मे बडी मात्रा मे बेगुनाह सिख मारे गये किन्तु सिखो की रोज रोज की उच्श्रृखलता से समाज इतना आक्रोश मे था कि बेगुनाह सिखो के मरने या मारे जाने के बाद भी किसी गैर सिख को उस समय कोई दुख या सहानुभूति नहीं थी। मुझें याद है कि मै उस समय भारतीय जनता पार्टी का जिला अध्यक्ष था। मै इसके पूर्व अठारह माह की इन्दिरा की आपात्कालीन जेल भी काट चुका था। यदि इन्दिरा जी मरती तो मुझे कोई दुख नही होता किन्तु मेरे मन मे भी इन्दिरा जी की अपेक्षा सिखो के प्रति ज्यादा कटु भाव था। दो दिनो तक हुए कत्लेआम मे बेगुनाह सिखो के मारे जाने के बाद भी मेरे मन मे दया का भाव नही आया। प्रश्न उठता है कि इसका दोषी कौन? स्पष्ट है कि लम्बे समय से जारी सिख क्रिया के विरूद्ध मेरे मन मे भी एक प्रतिक्रिया का भाव था।

यदि हम गुजरात की चर्चा करे तो वहां का इतिहास भी इस सिख कथा से भिन्न नही। सिखो के समान ही इस्लाम भी संगठन के रूप मे सम्पूर्ण समाज को लगातार परेशान कर रहा था। संघ परिवार ने मुसलमानों की इस कमजोरी का लाभ उठाते हुए बाबरी मस्जिद विध्वंस के रूप मे क्रिया की। इस्लाम दबकर आतंकवाद की दिशा मे मुडा। गोधरा कांड के बाद ज्वालामुखी फूटा। हजारो की संख्या मे बेगुनाह मुसलमान मारे गये। सम्पूर्ण भारत मे दो तीन दिनो तक कोई ऐसा गैरमुसलमान नही था जिसे इस कत्ले आम से बुरा लगा हो। मेरा तो यहा तक विचार है कि यदि गुजरात मे वैसा नही हुआ होता तो संभव है कि सम्पूर्ण भारत मे सिखो की घटना दुहराई जा सकती थी । गोधरा कांड तक मै राजनीति छोड चुका था। मै उस समय रामानुजगंज शहर का चेयरमैन था तथा चुनाव मे रामानुजगंज के अधिकांश मुसलमानो ने मुझे वोट दिया था। इसके बाद भी मै गुजरात मे हुए कत्लेआम के विरूद्ध नही रहा। बाबरी मस्जिद विध्वंस एक क्रिया थी । उसके विरूद्ध मुसलमानो ने आतंक का सहारा लेकर कुछ क्रिया की। गुजरात दंगे गोधरा की क्रिया की प्रतिक्रिया मात्र थे क्रिया नही क्योकि क्रिया योजना बद्ध होती है, सोच समझकर होती है और प्रतिक्रिया भावनात्मक तथा क्षणिक । चाहे वह पंजाब का कत्लेआम हो या गुजरात का उस समय तो मेरे मन मे कोई अपराध भाव नही था।

प्रश्न उठता है एक ऐसी एक पक्षीय अमानवीय संविधान विरूद्ध पतिक्रिया के बाद भी इन बीस तीस वर्षो मे क्या सिख और मुस्लिम संगठनो ने कोई सबक सीखा ? क्या ये दोनो संगठन फिर से इन दोनो घटनाओ को भूलकर उसी राह पर नही बढ रहे है जिसके परिणाम स्वरूप ऐसी घटनाए घटित हुई। क्या सिख भिन्डरावाले जैसे आतंकवादी को फिर से महिमा मंडित नही कर रहे। अब तो हालात यहां तक दिख रहे है कि सिख बिल्कुल सामने आकर बेअंन्तसिंह के हत्यारे राजोआना के समर्थन मे तर्क देने लगे है। आतंकवादी भुल्लर के समर्थन मे तो पंजाब की अकाली दल सरकार भी खडी दिख रहो है। ऐसा लगता है कि सिखा ने सन चौरासी से कुछ नही सीखा ।

वैसे सीखा तो गुजरात दंगो से मुसलमानो ने भी कुछ नही। जिस तरह गुजरात के बाहर का मुसलमान आज भी गुजरात दंगो की रट लगा लगा कर सम्पूर्ण समाज को याद कराये रखता है, जिस तरह अफजल गुरू के मामले मे कश्मीर के मुख्य मंत्री को स्टैण्ड लेना पडा। जिस तरह म्यामार की घटनाओं को बहाना बनाकर भारत मे अशान्ति फैलाने की कोशिश की गई, वह यह सिद्ध करने का पर्याप्त आधार है कि गुजरात कत्लेआम से मुसलमानो ने भी कोई सबक नही सीखा। अन्धा भी देख रहा है कि सिखो को छोडकर शेष समाज मे सिख विरोधी दंगे मे लिप्त लोगो के प्रति कोई घृणा का भाव नही है न ही गुजरात दंगों मे लिप्त लोगो के ही विरूद्ध है। आज नरेन्द्र मोदी की मांग प्रधानमंत्री के रूप मे उठने का सिर्फ एक ही आधार है कि उन्होने मुस्लिम साम्प्रदायिकता को कुचलने का साहसिक काम किया। इतना स्पष्ट संदेश दिखने के बाद भी पता नही क्यो सिख या मुसलमान सच्चाई नही देख पा रहे है। राजनेताओ का तो काम ही होता है कि ऐसे नासमझो को बढा चढा कर उनका उपयोग कर लिया जावे। चाहे लालू मुलायम हो या कांग्रेस। मौका पडने पर सभी अपने लाभ हानि का आकलन करके आपको अकेला छोड देंगे। अब वैसा जमाना नही है जब संगठन से सिर्फ लाभ ही लाभ होने वाला है। सारे विश्व मे लोकतंत्र मजबूत हा रहा है। राजनैतिक प्रतिबद्धताएं छिन्न भिन्न हो रही है। ऐसे समय मे भी यदि देश काल परिस्थिति अनुसार आपने अपना रंग नही बदला ता इतिहास के दुहराने का खतरा तो रहेगा ही ।

आप संघ परिवार से भी कुछ क्यो नही सीखते । संघ परिवार भी आपकी ही तरह एक संगठन है । वह भी पूरी तरह कट्टर है। सब जानते है कि संध परिवार की आंतरिक चर्चाओ मे गांधी के प्रति घृणा और गोडसे के प्रति सहानभुति का भाव रहता है। किन्तु संघ परिवार ने प्रत्यक्ष आकर गोडसे को महिमा मंडित नही किया। यहा तक कि उसने तो देश काल परिस्थिति अनुसार अपने प्रातः स्मरण मे गांधी को शामिल करने तक का नाटक कर दिया। संघ के लोगो ने प्रारंभ मे तो कुछ कुछ प्रज्ञा ठाकुर असीमानद का समर्थन भी किया किन्तु बाद मे चुप रहना ही ठीक समझा । भाजपा अध्यक्ष राजनाथ सिंह जी ने तो यहां तक सफाई दी कि वे कभी जेल मे मिलने प्रज्ञा ठाकुर के पास नही गये। एक वे है जो यदि गये भी हो तब भी इन्कार करने की पहल कर रहे है और एक आप है कि न गये हो तब भी अब जाने की बात कर रहे है । मै स्पष्ट हूँ कि यदि असीमानंद प्रज्ञा ठाकुर पुरोहित के समान किसी आतंकवादी को फांसी की सजा हो जाय तो संध परिवार अन्दर अन्दर चाहे जो करे किन्तु उनके पक्ष मे मैदान मे आकर खडा नही होगा।

मेरी इच्छा है कि आप सब गंभीरता पूर्वक वातावरण को समझे । जिस तरह संध परिवार के लोग धीरे धीरे टूट टूट कर समाज मे एकीकृत हो रहे है उसी तरह आप भी संगठन सर्वोच्च की जगह समाज सर्वोच्च की भाषा बोलने की आदत डाले । आप अपने धर्म स्थानो मे संगठनात्मक चर्चाओ का बहिष्कार करे। धर्म का अर्थ गुण प्रधान क्रियाओ तक सीमित करे। यदि आपने ऐसी पहल की तो भविष्य मे आप भी सुरक्षित रहेगे तथा समाज भी किसी नये कलंक से बच जाएगा अन्यथा आप तो परेशान होगे ही । शेष समाज को भी शान्त नही रहने देंगे।

पत्रोत्तर

1 श्री शिवहरि अग्रवाल, मालवीय नगर, जयपुर, राजस्थान

प्रश्न– आपका प्रेरणा दायक पत्र प्राप्त हुआ जो कि याद मे धरोहर रूप मे संरक्षित होगा। मैने आपके जयपुर स्थित प्रतिनिधि को आंशिक राशि भिजवा दी है। कृपया स्वीकार कर अनुगृहित करे। आपका, सामाजिक राजनैतिक तथा आर्थिक दशा पर विश्लेषण, मन को उद्वेलित कर यह विचार करने पर मजबूर करता है कि इस आपाधापी के समय मे स्पष्ट एंव समय पूरित आवश्यकताओ की एक धुंधली सी ज्योति जलाने का प्रयास भी कोई तन मन एंव सर्वस्व निछावर कर कर रहा है। भगवान से प्रार्थना है कि सदा आपको इसी प्रकार का उत्रोत्तर प्रयास करने का साहस दे।

मै एक साधारण मध्यम वर्गीय परिवार से पेंशन भोगी व्यक्ति हूँ। जिसे दार्शनिक आध्यात्मिक, धार्मिक तथा वर्तमान मे देश की दिशा एंव दशा जानने की उत्कण्ठा होती है। देश मे यदि कही पर अथवा संसद म कुछ अराष्टीय अवांछनीय घटित हो जाता है तो मन बडा कसैला तथा बेचैन हो उठता है कि क्या हमारे पितामह ने इसलिये ही सहादत दी थी? फिर वैसे आपके ज्ञान तत्व मे उसी का विशष विस्तार से विवेचन पढकर तसल्ली कर लेता हूँ जैसी कन्या भ्रूण हत्या पर आदि। वर्तमान के राजनैतिक परिवेश मे मोदी जी को भाजपा केन्द्र की राजनैतिक शक्ति के स्वरूप मे अवश्य लाये किन्तु प्रधान मंत्री के रूप मे नही गृहमंत्री के रूप मे जहा देश के अंदर के देश द्रोहियो से ज्यादा खतरा नजर आता है। उसी धरती की माटी से लोहपुरूष सरदार बल्लभ भाई पटेल आये थे जिन्होने देश को एक सूत्र म बांधा था और जो छिद्र रहे गये थे, वे भी आज नासूर बन गये है तथा द्रोही की राजनीति मे देश प्रेम की जगह देश द्रोही बन गये है।

उत्तर–– मै स्वयं महसूस करता हूँ कि नरेन्द्र मोदी प्रधानमत्री पद के लिये बिल्कुल ही अनुपयुक्त है, क्योकि प्रधानमंत्री को अधिकतम लोकतांत्रिक होना चाहिये तथा गृहमंत्री को न्यूनतम लोकतांत्रिक होना चाहिये। यदि प्रधानमंत्री थोडा भी तानाशाही वृत्ति का हुआ तो समाज का वही हाल होगा जैसा पण्डित नेहरू से लेकर मनमोहन के पूर्व तक हुआ। भारत मे समाज लगातार गुलाम होता चला गया। दूसरी ओर गृहमंत्री सीमा से ज्यादा लोकतांत्रिक हुआ तब भी अव्यवस्था निश्चित है जैसा कि हम भारत मे देख ही रहे हैं। मै समझता था कि ऐसा सोचने वाला मै अकेला हूँ किन्तु आपके पत्र ने मेरी हिम्मत बढा दी है।

बडी समस्या यह भी है कि कोई भी तानाशाही प्रवृत्ति कभी लोकतांत्रिक प्रधानमंत्री को बरदास्त नही कर सकती है। अम्बेडकर जी तो हमेशा ही सर्वोच्च सत्ता की दांव पेच करते रहे । श्यामा प्रसाद मुखर्जी भी कभी लोकतांत्रिक नही रहे । पण्डित नेहरू अर्ध लोकतांत्रिक थे और वल्लभ भाई पटेल अलोकतांत्रिक । वल्लभ भाई पटेल ने जिस तरीके से पांच सौ राजाओ को निपटाया वह तरीका लोकतंत्र के उच्च मानदण्डो के अनुरूप नही था। पटेल कश्मीर समस्या को जिस प्रकार निपटाना चाहते थे वह भो लोकतंत्र के उच्च आदर्श नही थे। ये दोनो समस्याएं ऐसी थी जिसमे लोकतंत्र से समझौता करना देश की मजबूरी थी । इसका यह मतलब नही कि एसी कुछ घटनाओ को आधार बनाकर लोकतंत्र के विरूद्ध ही नीति बन जावे। प्रधानमंत्री और गृहमंत्री को लोकतंत्र और तानाशाही के बीच तालमेल करना पडता है जिसमे प्रधानमंत्री को अधिकतम लोकतांत्रिक तथा गृहमंत्री को अधिकतम तानाशाह होना ही चाहिये। वर्तमान मे मनमोहन सिंह और चिदम्बरम की जोडी बिल्कुल ठीक है जिसमे मनमोहन सिंह अधिकतम लोकतांत्रिक तथा चिदम्बरम अधिकतम तानाशाह प्रवृत्ति के है। जब भारत की अर्थ व्यवस्था, कानून व्यवस्था से भी ज्यादा गंभीर हुइ और मनमोहन के बस की बात नही रही तो चिदम्बरम ने आकर सब बाधा पैदा करने वालो को तीन दिन मे ही निपटा दिया। न अब कही महंगाई का हल्ला दिख रहा है न कहीं मूल्य वृद्धि का। यदि दिग्विजय सिंह ने नक्सलवाद को न बचाया होता तो नक्सलवाद भी देश मे अन्तिम सांस गिन रहा होता।

सरदार पटेल चिदम्बरम आदि सफल गृहमंत्री होने के बाद भी यदि पधानमंत्री हो जावे तो देश के समक्ष वैसी ही हालत बन सकती है जैसे हिटलर के समय मे जर्मनी की, सद्दाम के समय इराक की , आसामा के समय इस्लाम की अथवा संघ शिवसेना के समय हिन्दुत्व की हो रही है। मोदी उसी तानाशाही के प्रतीक है जो यदि प्रधानमंत्री बन गये तो भविष्य खतरे मे रहेगा और यदि गृहमंत्री बने तो सोने मे सुहागा। यह अवश्य है कि गृहमंत्री आम तौर पर लोकतांत्रिक नेतृत्व के विरूद्ध दांव पेच करके उसे अस्थिर करते रहता है जो घातक होता है। नरेन्द्र मोदी तो इस बीमारी के अन्दर तक मरीज है।

2 श्री राम कृष्ण जाखेटिया, जयपुर राजस्थान

प्रश्न– ज्ञान तत्व पढता हूँ। मनन करता हूँ । व्यवस्था परिवर्तन का आपका स्वप्न साकार हो यही ज्ञान तत्व क पाठको और वर्तमान तत्र से निचोडित लोक मे छटपटा रहे लोगो की इच्छा है। पर यह इतना सरल नही है। आप विचार मंथन कर रहे है। और आपक विचारो से सहमत लोग भो। पर इस प्रक्रिया से बहुत बडी उपलब्धि होगी यह दूर की कोडी दिखाई देती है। श्री अन्ना हजारे जी भी आपके ही पथ के पथिक है। वे भी हारे थके से लग रहे है। उनके ऐतिहासिक आंदोलन कोई रंग ला सके हो ऐसा नही लगता। कोई रंग ला सके हो ऐसा नही सुनाइ देता । श्री अरविन्द केजरीवाल अवज्ञा आंदोलन कर रहे है गांधी के पद चिन्हो पर चलते हुए। यदि उन्हे आपका और अन्ना जी का समर्थन व सहयोग मिले तो मंजिल तक पहुंचना सरल होगा। एसी मेरी व्यक्तिगत मान्यता है। आप एक ही मंजिल के पथिक है । अलग खेमो और तम्बुओ मे बटे हुए है। यह चिन्तन का विषय है। इसके लिये आपका अहम को छोडना होगा।

उत्तर– किसी विचारक की अपनी सीमाए भी होती है तथा स्वतंत्रताएं भी। किसी विचारक को कभी किसी संगठन का न तो सदस्य होना चाहिये न बनाना चाहिये। किसी संस्था के साथ जुड सकते है क्योकि संगठन का एक अनुशासन होता है जो विचारक की स्वतंत्रता मे बाधक होता है। संस्था का कोई अनुशासन नही होता है।

विचारक को किसी प्रकार की सक्रियता से भी बचना चाहिये । सक्रियता भी विचारक की स्वतंत्रता को सीमित करती है। विचारक को प्रसिद्धि के पीछ भी भागने का प्रयास नही करना चाहियें । विचारक की भूमिका उस प्रकार से सतर्क रहनी चाहिये जैसे नदी मे डूबते को निकालने की सतर्कता । यदि बचाने वाला सतर्क नही रहा तो दोनो को डूबना निश्चित है।

गांधी जी एक विचारक थे। गांधी जी कभी किसी संगठन के सदस्य नही बने। वे कभी किसी अनशासन से नही बंधे। सुभाष चंद्र बोस विधिवत कांग्रेस के चुने हुए अध्यक्ष थे। यदि गांधी अनुशासित होते तो या तो सुभाष बाबू को अध्यक्ष स्वीकार कर लेते या विरोध करते। गांधी ने सुभाष बाबू को न स्वीकार किया न विरोध । उन्होने मात्र अपना विरोध व्यक्त किया न कि कुछ क्रिया की। क्रिया और विचार के बीच की सीमा रेखा बनाना गांधी जानते थे।

आज के वातावरण मे अन्ना जी एक ऐसे व्यक्तित्व है जिन्हे हम एक गंभीर विचारक कह सकते है। अन्ना जी ने कुछ भूल की । उन्होने गांधी का अनुशरण करते हुए अनशन का सहारा लिया जो गांधी विचारो के बिल्कुल विपरीत था। गांधी ने कभी भी न अंगेजों के खिलाफ कोई अनशन किया न ही जनमत जागरण के लिये। उन्होने हमेशा ही अनशन किया अपने शुभ चिन्तको के हृदय परिवर्तन के निमित्त। अन्ना जी ने महाराष्ट मे भ्रष्टाचार के विरूद्ध अनशन करके स्वयं का भटका लिया । अन्ना जी ने जो पांच लोगो का संगठन बनाया वह भी उनकी एक बडी भूल थी । उन्हे संगठन से उपर रहना चाहिये था। जब यह संगठन गलत राह पर जाने लगता तो अन्ना जी को अपने संगठन के खिलाफ अनशन करना चाहिये था। आज अन्ना को अपने मुंह से बार बार अपनी सफाई देनी पड रही है यह दुखद है। गांधी जी पर यदि कोई आरोप लगा तो गांधी जी सिर्फ यर्थाथ को स्पष्ट मात्र करते थे न कि सफाई देत थे।

तीसरी और सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या यह है कि अन्ना जी स्वयं स्पष्ट नही है कि वे सत्ता के विकेन्द्रीयकरण का प्राथमिकता देना चाहते है या चरित्रवान लोगो को संसद मे भेजने को। यदि अन्ना जी दोनो को समान रूप से लेकर चलना चाहते है तो मेरे विचार मे वे भ्रम के शिकार है। चरित्र की राजनीति संचालक और

संचालित के बीच दूरी बढाने का काम करती है। सत्ता के विकेन्द्रीयकरण मे यह दूरी घटती ह। दोनो एक साथ संभव नही है। अन्ना जी की स्वयं की अस्पष्टता मुझे संकट मे डालती है कि मै कैसे गलत प्राथमिकता का समर्थन करूं।

फिर भी वर्तमान जीवित लोगो मे मुझे अन्ना हजारे के समकक्ष कोई अन्य व्यक्ति नही मिला जिसमे आंशिक रूप से भी विचारक के गुण मौजुद हो। यही कारण है कि मै हमेशा ही अन्ना जी का प्रशंसक भी हूँ और सहयोगी भी। अरविन्द केजरीवाल की टीम का भी मै समर्थक हूँ। । मै विजय कौशल जी, रामदेव जी, गोविन्दाचार्य जी आदि का भी समर्थक हूँ। मै राजनेताओ मे भी मनमोहन सिंह नीतिश कुमार नरेन्दमोदी आदि का प्रशंसक हूँ। किन्तु मै भारत की वर्तमान स्थितियों का समाधान इन सबके प्रयत्नो मे नही देखता। इन सबके प्रयत्नो मे वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था मे सुधार की तो बाते भरी पडी है किन्तु व्यवस्था परिवर्तन का कोई मार्ग नही है। व्यवस्था परिवर्तन का मार्ग तो राइट टू रिकाल ग्राम सभा की शक्ति सम्पन्नता, सत्ता का शासक के स्थान पर ब्यवस्थापक बनना आदि है। चाहे अन्ना जी हो या अरविन्द जी। ये लोग सब कुछ बोलते है समझते है किन्तु आंदोलन करते है लोकपाल के लिये । परिणाम जो होना था वह हुआ।

मै एक विचारक हूँ । मैने, गांधी, विनोबा, लोहिया, जय प्रकाश तथा अन्ना जी से बहुत कुछ सीखा भी है और अनुभव भी लिया है। मै न किसी संगठन से जुडा हूँ न जुडूगा और न ही बनाउंगा । मै अपनी स्वतंत्रता को किसी अनुशासन की सीमाओ से नही बांध सकता । मै प्रशंसा के लिये मीडिया का भी सहारा नही लेता। जो भी लोग व्यवस्था परिवर्तन के कार्य मे लगे है उन सबकी समीक्षा प्रशंसा समर्थन तथा सहयोग है। दो हजार चौदह के चुनाव मे यदि कोई स्पष्ट दिशा किसी की नही बन सकी तो उसके बाद मै अपनी सहभागिता सिर्फ उस सगठन को समर्पित कर दूंगा जो लोक संसद की दिशा मे आगे बढेंगा
तथा तय करेंगा कि पहले व्यवस्था परिवर्तन होगा तब चरित्र निर्माण। पहले चरित्र निर्माण और तब व्यवस्था परिवर्तन मेरे एजेन्डे मे दूर दूर तक नही है। न मै चरित्रवान हॅ न दावा करता हूँ न ही उसका ढिंढोरा पीटता हूँ । मै तो चरित्र को व्यक्तिगत मानकर नीतियो पर ज्यादा विचार करने का पक्षधर हूँ।

3 श्री ओम प्रकाश पांडेय मंजुल प्रधानाचार्य भारत इंटर कालेज बरेली उत्तर प्रदेश

प्रश्न— भावी भारत का संविधान एक समीक्षा नामी ग्रन्थ को पाकर कृतकृत्य हुआ। आपकी कृपा के प्रति किन शब्दो मे कृतज्ञता व्यक्त करू यह समझ मे नही आ रहा है। समझता हूँ यह जीवन की विडम्बना ही थी कि कथित पुस्तक मुझे सन 1999 के बजाय 13 वर्ष बाद 2013 मे प्राप्त हुई (कहते है 12 वर्षो के बाद यानी 13 वर्ष मे तो घूरे के दिन भी फिर जाते है)

पुस्तक को पढकर अच्छा ही नही, मजा आ गया। इसमे आदर्शोन्मुख यर्थाथ होने के बावजूद पढने मे गल्प जैसा आनन्द आता है। मै इसे संविधानात्मक उपन्यास भी कह सकता हूँ। कही कही मुझे इसमे मेरी कल्पना आभासिंत हुई । राहुल सांस्कृत्यायन की युटोपिया बाईसवी सदी की भांति। हालांकि उसमे बाईसवो सदी की सामाजिक व्यवस्था की काल्पनिक झांकी प्रस्तुत की गयी है जबकि इसमे प्रशासनिक संविधान की रूप रेखा । दूसरा अन्तर यह भी है कि जहां 50 वर्ष पूर्व रचित बाईसवी सदी की झांकी की न्यूनतम झलक का अल्पतम आभाष भी अबतक नही हुआ है, वहीं इन दिनो भारतीय संविधान मे आपके विचारानुकूल कई संशोधन हो चुके है या हो रहे है। कृत्रिम उर्जा के श्रोत गैस पर सब्सीडी की खंडित व्यवस्था इसका अधतन एंव ज्वलन्त उदाहरण है भले ही सरकार यह न माने कि उसके द्वारा शनै शनै लागु किये जाने वाले सुधारो के पीछे आपके सुझाव है। सो भावी भारत का संविधान निश्चित रूप से युटोपिया नही निसंदेह एक भवतव्यता है। देश भर के चुने हुए 100 विद्धानो ने 15 वर्षो मे विचार मंथन के बाद वास्तव मे भावी भारत का संविधान नामक नवनीत निकाल कर प्रस्तुत किया है। इसमे संवैधानिक संशोधन के द्वारा सामाजिक व्यवस्था के परिवर्तन हेतु जो कुछ भो है प्रायः सत्य शिवम और सुन्दरम है। भाव और कला दोनो ही दृष्टि से यह श्रेंष्ठ एंव सशक्त है। भावो का तो कहना ही क्या अभिव्यक्ति का माध्यम भी परिमार्जित साहित्यिक एंव बोधगम्य है। संपूर्ण पुस्तक को पढकर मुझे लगा कि आपकी भाषा पर तो सुदृढ पकड है ही, आप एक विद्वान दूरदर्शी एंव अनुभवी समाज शास्त्रो है । समाज शास्त्रो से अधिक आप मुझ राजनीतिज्ञ लगे और राजनीतिज्ञ से अधिक विधिवेता एंव विधिवेता से भो अधिक अर्थशास्त्रो आदि आदि। आपकी सबसे बडी विशेषता है कि आपके तर्क सब को संतुष्ट करने का प्रयास करते है। वे आग्रह पूर्वाग्रह और दुराग्रह से दूर अति संतुलित होते है। आप से अधिक सशक्त सर्तक एंव सुतर्क विश्लेषण एंव विवेचना मैने आचार्य रजनीश मे देखी है अन्य किसी मे नही । हालांकि आचार्य रजनीश का क्षेत्र अध्यात्म का क्षेत्र रहा है। आपकी हार्दिक उदारता का इससे अच्छा उदाहरण क्या हो सकता है कि पृष्ठ 46 पर आप स्वयं कहते है ''मेर विचार न तो अन्तिम है न ही आदश।''

सम्पूर्ण ग्रन्थ मे गाम स्वराज्य, सत्ता का विकेन्द्रीयकरण, सत्ता केन्द्रो की व्यवस्था एंव श्रममूल्य के महत्व आदि की बाते इतनी अधिक बार एंव इतनी अधिक शक्ति के साथ कही गई है कि पाठक का मस्तिष्क इनसे अनुगजित हो जाता है। मूल अधिकार, महिला, शासन प्रणाली, शस्त्रनियमन व प्रयोग, तथा न्याय व न्याय व्यवस्था पर आपके विचार चमत्कार पूर्ण एंव उपयोगी है। समाज पर राज्य के क्रमिक प्रभाव के विकास विषयक चिन्तन मे आप हाव्स, लाक और रूसो की विचार धारा के काफी निकट है। जैसा कि मै पूर्व इंगित कर चुका हूँ कि इसे पढने मे उपन्यास जैसा आनंद आता है। इस तथ्य की पुष्टि हेतु कुछ साहित्यिक सौष्ठव सम्पन्न पक्तिया दृष्टब्य है ''राजनेता अधिकारी पूंजीपति पत्रकार और अपराधी पंच प्यार बनकर समाज का शोषण करने मे लगे है ''(पृष्ठ 48), एक सर्वेक्षण के अनुसार भारत मे अपराधो मे सजा का प्रतिशत सिर्फ एक है 90 प्रतिशत तक अपराध तो थाने तक पहुचते ही नही। 10 प्रतिशत मे कुछ पुलिस कुछ गवाह और कुछ न्यायधीशो द्वारा भ्रष्टाचार की मिलावट कर देने से खत्म हो जाते है । 1 प्रतिशत लाग ही सजा पाते है जो अप्रत्यक्ष रूप से 99 प्रतिशत अन्याय ही है इत्यादि । 13–14 वर्ष पूर्व लिखित पुस्तक मे कही कही तो आपने सत्य भविष्यवाणियां करके अचम्भित कर दिया है । यथा पृष्ठ 75 पर जाति, धर्म, राष्ट, क्षेत्र और आर्थिक स्थिति आज भी पयाप्त प्रभाव रखते है तथा लिंग भेद अपने प्रारंभिक चरण मे है । जो अब सर्वाधिक सफल अस्त्र समझा जा रहा है। तथा नितांत ज्वलंत उदाहरण पृष्ठ 64 पर ''स्वतंत्रता के बाद के पचास वर्षो के अपराध और दण्ड का संतुलन इतना बिगड गया है कि बलात्कार के लिये अब मृत्यु दण्ड का प्रावधान करने की आवश्यकता महसूस हो रही है। इत्यादि। पर एकाध स्थान पर आपकी भविष्यवाणी चंदा स्वामी की भविष्यवाणी जैसी हो सिद्ध हुई है देखे 78 पर ''भारत एक सौ करोड व्यक्तियो, बीस करोड परिवारो या एक लाख गांवो का देश होगा । हालांकी यह भविष्यवाणी से अधिक आकलन का विषय ह। पृष्ठ 26 पर आपके द्वारा व्यक्ति की आत्महत्या की स्वतंत्रता का विचार भी मुझे पसंद नही आया जीवन और मरण मे इश्वर का एकाधिकार है। सो इन क्रियाओ मे जो व्यक्ति दखल देता है वह अपराध ही नही पाप है । इसी प्रकार पृष्ठ 79 पर आपके गोवध संबंधी विचार से असहमति है । हालांकि संघ सभा मे डिग्री कालेजो के प्राचार्यो का प्रावधान न केवल अभिनव है वरन अत्योपयोगी एंव महत्वपूर्ण होने के कारण स्तुत्य भी है

मेरी कुछ जिज्ञासाए भी शान्त होना चाहती है । यथा आपने कुछ स्थानो पर राष्टपति तथा उपराष्टपति द्वारा अपने हाथ से लिखे पत्र की बात की है। स्वहस्त लेख से संबंद्ध रहस्य को स्पष्ट करने का कष्ट करे। आपने ग्रन्थ मे दलीय व्यवस्था का स्पष्ट वर्णन नही किया है न यह ही बताया है कि चुनाव मे भाग लेना एच्छिक है या अनिवार्य?

आपने फोन पर कहा था कि ध्यान से पढकर आपकी भावित भावी संवैधानिक योजना मे कमियां निकाली जाये। इस आदेश क अनुपालन मे निवेदन है कि प्रथम आपको पुस्तक का नाम मात्र भावी भारत का सविधान या भारत का भावी संविधान ही रखना चाहिये, न तो इसमे समीक्षा शब्द ही जोडते और न समीक्षा विवेचना स सम्बद्ध अनेक उदाहरण उल्लेख प्रस्तुत करते। पृष्ठ 38 पर आप एक गांव मे ही 2 ग्राम सभाएं बनाने के बारे मे कहते है । व्यावहारिक स्वरूप मे इसकी कोई सीमा रेखा बनानी चाहिये जो वे सब बैठकर भी बना सकते है और हम सब भी मार्गदर्शन कर सकते है यहां हम सब से आपका मन्तव्य क्या है पृष्ठ 14 पर 69वे बिन्दु मे है राष्ट्रपति लोक सभा से निवेदन करेगा मेरे अनुसार निवेदन के स्थान पर सिफारिश होना चाहिये। आपने गांव जिले प्रान्त और लोक सभा परिवार

सभा तथा संघ सभा के लिये जो संख्या व मानक निर्धारित किया है बढती हुई आबादी ने इस सब को ध्वस्त सा कर दिया है । ऐसा हो बढ रही मंहगाई के कारण सम्पत्ति के अधिकार से संबद्ध धन राशियां के बारे मे है। परिवार के एक सदस्य द्वारा अपराध करने पर सभी सदस्यो को सजा दिये जाने गुप्त न्याय व्यवस्था तथा परिवार से रजिस्ट्शन फीस लेने और व्यय काटकर उसे वापस करने आदि क सुझाव सुनने मे ही अच्छे है पर काफी अव्यावहारिक है। ग्राम सभाओ मे न्यूनतम और अधिकतम आबादी वाली के बीच तीन गुना अंतर रखने की समझ क्या कम अव्यावहारिक है। देश की व्यवर्स्थाथ संसद द्वारा मात्र 2 प्रतिशत संपत्ति कर लगाना आज के वेलफेयर स्टेट यग मे अति अतार्किक लग रहा है। शोष आयोगो का कार्यकाल भी शीर्ष सभाओ की भांति 6 वर्ष के बजाय 5 वर्ष ही रखा जाता तो क्या परेशानी थी। आपने लिखा है कि राष्टपति खतरा महसूस करने पर आपातकाल लागु करने के लिये उपराष्टपति और प्रमुख न्यायाधीश से चर्चा करेगा, वह प्रधानमंत्री से चर्चा क्यो नही करेगा । जबकि वह देश की आम जनता का प्रतिनिधित्व होगा। आपने लिखा है कि संसद के दोनो सदनो की संयुक्त बैठक की अध्यक्षता लोक सभा अध्यक्ष करेगा । मेरे अनुसार राष्टपति को करना चाहिये। मौलिक अधिकारो के परिपक्ष्य मे न्यायालय के बीच किसी मुद्दे पर अतिम रूप से असहमति होगी तो राष्टपति उपराष्टपति तथा प्रमुख न्यायाधोश मिलकर अतिम निष्कष निकालेंगे ऐसा आपने लिखा है । पर यदि तब भी अंतिम निष्कर्ष नही निकला तो? पृष्ठ 105 पर आपका तर्क ''मुक्षे आश्चर्य होता है कि जो सरकार शस्त्रो को अपराध नियंत्रण मे सहायक समझती है वही सरकार चुनाव या पर्व त्योहार के समय सबके शस्त्र जप्त क्यो कर लेती है'' बडा बेतुका लगा यह तो ऐसा ही तर्क है जैसे किसी से कहा जाय , उसके द्वारा पीटने पर तुम नाराज और आक्रामक क्यो हो। इससे अधिक चोट ता तुम्हे रपट कर गिरने मे लग जाती। और अब है प्रस्ताव की सबसे बडी सीमा जैसा कि आप स्वयं पृष्ठ 53 पर लिखते है इस संविधान मे संशोधन के बिना कोई स्वराज्य आ ही नही सकता यह मेरा स्पष्ट मत है। इस दिशा मे पूरा प्रयास करना चाहिये और जब तक इस संसद मे चोर डकैत मक्कार लबार और जादूगर बाजीगर प्रवत्ति के लोग रहेंगे तब तक आपका अपेक्षित संशोधन नही किया जा सकता। मेरी यह सुदृढ धारणा है कि या जबतक बहुत लम्बा खिंचेगा फिल्म मे विलेन की भांति और निश्चित रूप से एक दिन ऐसा स्वर्णिम प्रभात आएगा । जो इस जब तक के बदलने या खत्म होने का सुखद संदेश लाएगा।

उत्तर– आपके पत्र के पूर्वार्ध पर मझ कुछ नही कहना है। मेरे बाइस वर्षो के उत्तरार्ध जीवन मे आप दूसरे व्यक्ति मिले जिन्होने भावी भारत का संविधान पुस्तक की इतनी बारीक समीक्षा की। उसमे बीस वर्ष बीतने के बाद भी किसी संशोधन की अब तक आवश्यकता नही पडी। इसके विपरीत भारत सरकार ने अपनी नीतियो मे हमारे यूटोपिया की कई बाते अक्षरशः लागु कर ली है जैसे आधार पहचान पत्र कैश सब्सीडी नरेगा अथवा कृत्रिम उर्जा मूल्य वृद्धि आदि। अन्य बातो पर भी विचार चल रहा है। आश्र्चय तो यह है कि जो बाते हम तीस चालीस वर्ष पूर्व ही निष्कर्ष के रूप मे घोषित कर चुके है वे बाते अब सरकारे मजबूरी मे कर रही है या अब भी करने की सोच रही है। आपने मेरे विचार की तुलना हाब्स लाक रूसो आदि से की है। मैने इतिहास पढा नही। मैन इन विचारको को कभी पढा नही । आपके लिखने से ही मुझ पता चला।

आपने आत्महत्या को पाप भी लिखा और अपराध भी। मेरे विचार मे आत्महत्या असमाजिक है। पाप है किन्तु अपराध नही क्योकि आत्महत्या किसी अन्य के मौलिक अधिकारो का न उल्लंधन है न ही आक्रमण । किसी भी कार्य को अपराध तभी कहा जा सकता है जब वह किसी अन्य के मौलिक अधिकारो का अतिक्रमण करे। किसी अन्य के संवैधानिक अधिकारो का उल्लंधन गैर कानूनी होता है तथा सामाजिक अधिकारो का उल्लंधन अनैतिक असामाजिक या पाप। मै आपसे सहमत हूँ कि जीवन और मरण मे इश्वर का एकाधिकार है तो फिर सरकार या कोई अन्य ऐसे मामलो मे सीमा से आगे जाकर हस्तक्षेप क्यो करे? गो हत्या पर आप की मेरे विचारो से असहमति है। मेरा विचार है कि सिर्फ मनुष्य ही एकमात्र है जिसे व्यवस्था मे मौलिक अधिकार प्राप्त होते है। किसी भी पशु को चाहे वह गाय ही क्यो न हो या तो संवैधानिक अधिकार हो सकते है या सामाजिक । किन्तु मौलिक अधिकार प्राप्त नही हो सकते । गाय को संवैधानिक अधिकार देने की अपेक्षा सामाजिक अधिकार देना अधिक अच्छा है क्योकि गाय को संवैधानिक अधिकार देने से समान नागरिक संहिता पर विपरीत प्रभाव होगा। अतः मेरे विचार मे गाय को सामाजिक सुरक्षा देना ही ठीक रहेगा । संवैधानिक सुरक्षा से लाभ कम हानि अधिक होगी।

मेरी पूरी पुस्तक के दो भाग है । एक से चौबीस पृष्ठ तक प्रस्तावित संविधान के मूल एक सौ पैसठ अनुच्छेद है तथा पृष्ठ पचीस से एक सौ दस तक इस प्रस्तावित संविधन की समीक्षा है। मैने प्रस्तावित संविधान मे एक जगह राष्टपति द्वारा अपना त्यागपत्र देते समय हस्त लिखित पत्र की बात की है जो विशेष सतर्कता के अतिरिक्त कुछ अधिक महत्व की नही है। मैने दलीय व्यवस्था की बात नही की है क्योकि दलीय व्यवस्था पूरी तरह भारतीय संविधान से बाहर थी। कही भी भारत के वर्तमान संविधान मे दलीय व्यवस्था को स्वीकार नही किया गया है। दलीय व्यवस्था का कही भी संविधान मे विरोध तो नही है किन्तु असंवैधानिक अवश्य है क्योकि संविधान के अनुसार संसद चुने हुए व्यक्तियो से बनेगी न कि दलीय प्रतिनिधियो द्वारा। राजीव गांधी द्वारा लाया गया दल बदल विरोधी संशोधन पूरो तरह असंवैधानिक तो है ही साथ मे संविधान विरोधी भी है, क्योकि यह कानून संसद के प्रत्येक सदस्य को संसद मे अपना स्वतंत्र विचार रखने की आजादी पर अंकुश लगाता है। दल द्वारा जारी व्हीप स्वयं मे संविधान के विपरीत है। दल बनाना या उस तरह का संगठन बनाना जन प्रतिनिधित्व कानून का भाग है संविधान का नही।

निवेदन की जगह सिफारिश करने पर विचार किया जा सकता है। किन्त परिवार गांव जिला प्रदेश लोकसभा परिवार सभा आदि की सदस्य संख्या को आबादी के साथ जोडना आवश्यक नही। वह तो प्रारंभ से ही जुडा हुआ है पूरे भारत मे निन्यान्नवे प्रदेश या निन्यान्नवे जिले, जिले मे निन्यान्नवे गांव की संख्या निश्चित है। गांव की न्यूनतम आबादी और अधिकतम आबादी के बीच एक से तीन तक की सीमा है। इसमे आबादी घटने बढने से कोई प्रभाव नही पडेगा। जब यह किताव लिखी गई तब आबादी सौ करोड होने गांव की औसत आबादी एक हजार अर्थात पांच सौ से पंद्रह सौ के बीच सीमित थी। बाद मे अब आबादी सवा सौ करोड होने से औसत साढे बारह सौ अर्थात छ सौ पचीस से अठारह सौ पचहत्तर के बीच हो जायगी। आबादी डेढ अरब होगी तो गांव साढे सात सौ से साढे बाइस सौ के बीच हा सकता है।

आप एक गंभीर विचारक है किसी सुझाव को अव्यावहारिक कहने के बाद कोंई सुझाव न देना स्वयं मे अव्यावहारिक है। अपराध नियंत्रण के लिये संविधान मे कोई समयवद्ध परिणाम मूलक सुक्षाव शामिल करना हम आप सबकी मजबूरी है। यदि गुप्त मुकदमा प्रणाली या परिवार क सदस्यो को भी अपराध नियंत्रण मे शामिल करना अव्यावहारिक है तो आप ऐसे सुझाव दे जा अपराध नियंत्रण के लिये इनकी अपेक्षा अधिक ब्यावहारिक हो। मुझे या हमारी टीम को वर्षो विचार करने के बाद भी इससे अधिक व्यावहारिक मार्ग न मिलने से ही हमने इस अव्यावहारिक सरीखे दिखने वाले सुझाव को व्यावहारिक बनाने का विचार दिया है। सच्चाई यह है कि नये सुझावो को अव्यावहारिक कहना सुनने मे तो बहुत आसान और अच्छा है किन्तु विकल्प कठिन।

वर्तमान संविधान राज्य से वेलफेयर स्टेट की उम्मीद करता है । संविधान निर्माताओ को अपना दिमांग न लगाकर सिर्फ नकल करनी थी । पश्चिम के संविधान मे वेलफेयर स्टेट लिखा था तो इन्होने इसकी नकल कर दी। संविधान निर्माताओ को दायित्व तथा स्वैच्छिक कर्तब्य के बीच फर्क करना भी नहीं आता था। सच्चाई यह है कि सुरक्षा और न्याय राज्य का दायित्व होता है तथा अन्य वेलफेयर के काम स्वैच्छिक कर्तब्य। सुरक्षा और न्याय के लिये राज्य टैक्स ले सकता है किन्तु स्वैच्छिक कर्तब्य के लिये टैक्स नही ले सकता। इसके लिये वह मात्र दान चंदा या फीस ही ले सकता है। दो प्रतिशत सम्पत्ति कर सुरक्षा आर न्याय के लिये पर्याप्त है। मुझे तो लगता है कि दो प्रतिशत से भी कम टैक्स मे सरकार के खर्च पूरे हो सकते है।

राष्टपति की भूमिका अलग है और प्रधानमंत्री की अलग। सामान्य काल मे मंत्रिमंडल की सलाह पर राष्टपति काम करने को बाध्य है। किन्तु आपातकाल मे राष्टपति के लिये आवश्यक है कि वह मंत्रिमंडल उपराष्टपति तथा सुप्रीम कोर्ट के मुख्य न्यायाधीश को मिलाकर कार्य करे। सिर्फ मंत्रिमंडल ही राष्टपति को न तो आपात्काल के लिये वाध्य कर सकता है न ही मंत्रिमंडल विशेष अधिकार सम्पन्न हो सकता है। मंत्रिमंडल की सलाह पर राष्टपति उपराष्टपति तथा सर्वोच्च न्यायाधीश की सलाह से आपात्काल से निपटने की प्लानिंग करेगा जिसमे मंत्रिमंडल की सलाह का महत्व एक तिहाई तक ही सीमित होगा। ये तीनो मिलकर आपात्काल मे निर्णय करेंगे। इस तरह प्रधानमंत्री इस योजना मे शामिल है ही । लोक सभा या राज्य सभा के संचालन से राष्टपति को दूर रखना अच्छी बात है यही मानकर मैने संचालन के लिये लोक सभा अध्यक्ष को रखा है।

शस्त्रो के संबंध मे आपने जो तर्क दिया है उसका आशय मै नही समझ सका। आप विस्तार देंगे तब लिख सकूंगा । वर्तमान संवैधानिक व्यवस्था मे वेलफेयर राज्य का दायित्व होने से सुरक्षा और न्याय उसके स्वैच्छिक कर्तब्य मात्र है। राज्य सुरक्षा के लिये शस्त्र देकर नागरिक पर भी सुरक्षा का दायित्व विभाजित करती है। हमारा संविधान इसके विपरीत है। सुरक्षा और न्याय मे नागरिक सिर्फ स्वैच्छिक सहायक ही हो सकता है। दायित्व तो पूरी तरह राज्य का ही है। इसलिये किसी नागरिक के लिये अपनी व्यक्तिगत सुरक्षा के लिये शस्त्र रखने पर पूर्ण प्रतिबंध लगाया गया है । यदि दंगो के समय या आपत्ति काल मे शस्त्र अनावश्यक या विध्वंसक है तो सामान्य काल मे क्यो नहीं?

अन्त मे आप अच्छे लागो को संसद मे भेजने की वकालत करके उस प्रचार के शिकार दिखते है जो मेरी पूरी की पूरी धारणा के बिल्कुल विपरीत है। आज भारत का प्रत्येक राजनेता तथा धर्मगुरू अच्छे लोगो को आगे लाकर उन्हे व्यवस्था की पूरी जिम्मेदारी सौपने की वर्तमान व्यवस्था के पक्ष मे है। बाबा रामदेव सरीखे लोग तो इस स्वार्थ के पक्ष मे है ही किन्तु अन्ना जी सरीखे लागे भी स्वराज्य की बात करते फिरते अच्छे लोगो की बात करने लगते है। आप भी उसी लाइन पर गये लगते है। संचालक और संचालित के बीच दूरी घटनी ही स्वराज्य व्यवस्था है। यदि संचालक की नीयत खराब हो तो इस दूरी को अधिकतम घटाना सर्वोच्च प्राथमिकता है। अच्छे लोगो को चुनकर उन्हे अधिकार सम्पन्न बनाने की प्रणाली पूरी तरह असफल है। उनके अधिकार दायित्व और हस्तक्षेप को कम करना ही हमारा पहला काम होना चाहिये। मै कई दशको से लगातार लिख रहा हूँ कि संचालक और संचालित के बीच का अंतर कम करिये। तथा कथित अच्छे लोग भी इस दूरी को कम करने मे बाधक है। जनता अच्छे लोगो को चुनकर सारे अधिकार क्यो दे क्योकि यह प्रणाली फेल हो चुकी है । हम जिसे चुनेगे उसे कितने अधिकार देना ठीक है इसका निर्णय हम करेगे या वा।

सिद्धान्ततः नीति निर्धारण मे अच्छे लोगो का होना तानाशाहो मे तो आवश्यक है किन्तु लोकतंत्र मे नही । जो स्वराज्य प्रणाली मे तो बिल्कुल नहो । लोकतंत्र मे नीति निर्धारक एक सिस्टम बनाते है । उस सिस्टम के अन्तर्गत कुछ अच्छे लोगो का चुनकर उन्हे कार्यान्वयन का दायित्व दिया जाता है। वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत अच्छे लोगो को चुनकर भेजने के पीछे ताकत लगाना या तो धूतर्ता है या मूर्खता। न साठ सत्तर वर्षो में समाधान निकला न निकलेगा। यदि राजनेता और धर्मगुरू ऐसा कहे तो प्रतिवाद करने की जरूरत है न कि हवा मे बहने की। बन्द करिये अच्छे लोगो को चुनने की कोशिश । चाहे संसद मे बलात्कारी जावे या भ्रष्ट यदि वे संसद के दायित्व अधिकार और हस्तक्षेप को कम कर देंगे तो सब सुधर जायेगा और यदि अच्छे लोग जाकर भी अपना पावर नहीं घटाये तो हमारी समस्याएँ बढ़नी निश्चित है। चीन में मार्क्स, जर्मनी में हिटलर, इराक में सद्दाम सरीखे लोग जब तक सत्ता में रहे तब तक तो भगवान सरीखे अच्छे थे। इसलिये भले ही मैं इस विषय में अकेला हूँ लेकिन मैं अपनी बात पर मजबूती से डटा हूँ कि संचालक और संचालित के बीच की दूरी का घटना व्यवस्था परिवर्तन है और अच्छे लोगों को भेजकर उन्हें अधिकार सम्पन्न बनाना घातक।

जिस तरह आपने महनत की है और प्रश्न उठाये हैं उससे लगता है कि विचार मंथन भी संभव है और मखन मठा का पृथककरण भी। इस संबंध में आपके निःसंकोच पत्रोत्तर की प्रतीक्षा रहेगी। भले ही अन्य विषयों पर कुछ कम भी चर्चा हो किन्तु अच्छे लोगों का चुनाव एक बड़ी समस्या है न कि समाधान, इस बात पर व्यापक चर्चा आवश्यक है।

4श्री रविशंकर, जनसत्ता बारह अप्रैल दो हजार तेरह

विचार :— खाद्य सुरक्षा विधेयक मनरेगा के बाद यूपीए सरकार की दूसरी बड़ी जन – कल्याणकारी पहल है। 2009 के चुनावों में किसानों की कर्जमाफी, मनरेगा, सूचना का अधिकार जैसी योजनाओं ने कांग्रेस को 207 सीटें दिला दी थीं। उसी को ध्यान में रखते हुए कांग्रेस लोकसभा चुनाव से ठीक पहले खाद्य सुरक्षा विधेयक को अंतिम रूप देकर सियासी फायदा उठाने की फिराक में है। खाद्य सुरक्षा योजना की बात यूपीए सरकार चार साल से कर रही थी, विधेयक को अंतिम रूप देने में इतना वक्त क्यों लगा? भले कानून लागू होने के तीन वर्ष बाद कीमतों में संशोधन की बात कही गई है, लेकिन विधेयक के प्रावधानों में कई विसंगतिया है।

पहली तो यह कि पांच किलो अनाज से किसी व्यक्ति की महीने भर की जरूरत कैसे पूरी होगी, यह सोचने वाली बात है। जबकि सुप्रीम कोर्ट ने प्रतिव्यक्ति सात किलो अनाज मुहैया कराने का निर्देश दिया था। वहीं विधेयक के प्रावधानों के मुताबिक अलग–अलग राज्य इसे लागू करने के लिये अलग अलग समय निर्धारित कर सकते हैं। उनके अपने अपने प्रावधान होंगे। यानी सरकार का एक अहम मकसद राज्य सरकारों के भरोसे पर है। यह अलग बात है कि कुछ राज्यों ने खाद्य सुरक्षा के कुछ बेहतर प्रावधान लागू किए हैं।

अहम सवाल यह है कि पांच किलो अनाज भूखे पेट को भरने में कितना सहायक होगा। क्योंकि सरकार की इस मुहिम से प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन केवल 167 ग्राम अनाज मिलेगा। क्या ऐसे में हमें सचमुच यह मान लेना चाहिए कि यह योजना भारत को भुखमरी और कुपोषण से निजात दिलाने में सहायक होगी? ऐसे अनेक सवाल प्रस्तावित कानून के साथ जुड़े हुए हैं।

सरकार यह कैसे दावा करेगी कि उसने सभी के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित कर दी? आज भी दश में करीब बत्तीस करोड़ लोगों को एक वक्त भूखे पेट ही सोना पड़ता है। वही ग्लोबल हंगर इंडेक्स – 2012 के मुताबिक इक्यासी देशों की सूची में भारत का स्थान सड़सठवां है, जो पड़ोसी मुल्क पाकिस्तान और श्रीलंका से भी नीचे हैं। मौजूदा वक्त में देश की लगभग एक तिहाई आबादी भूखी और कुपोषित है।

पोषण से जुड़ी कई संस्थाओं के आकलन के मुताबिक एक वयस्क व्यक्ति को पर्याप्त पोषाहार के लिए प्रतिमाह बारह से चौदह किलो अनाज के अलावा डेढ़ किलो दाल और आठ सौ ग्राम खाद्य तेल की जरूरत पड़ती है। लेकिन सरकार केवल पांच किलो अनाज देकर खाद्य सुरक्षा की महज खानापूर्ति करना चाहती है।

जाहिर है, सरकार की इस मुहिम के बावजूद देश की सतहत्तर प्रतिशत जनसंख्या को अपनी आय का सत्तर प्रतिशत हिस्सा केवल भोजन के लिए खर्च करते रहना पड़ेगा। यानी उन्हें मंहगाई और भुखमरी का दंश झलते रहना होगा। दूसरी तरफ, कुपोषण भी बना रहेगा। क्योंकि प्रोटीन की जरूरत को पूरा करने के लिए दालों और वसा की जरूरत को पूरा करने के लिए खाने के तेल का सरकार ने कोई प्रावधान नहीं किया है।

एक बड़ा सवाल यह है कि इतनी बड़ी योजना के लिए पैसा कहां से आएगा। क्योंकि इस कानून को लागू करने में सरकार पर पहले साल एक लाख बीस हजार करोड़ रूपए सब्सोडी का बोझ आएगा, जो कि पिछले वित्त वर्ष की तुलना में पचीस से तीस हजार करोड़ रूपए अधिक होगा। हालांकि यह राशि सरकार द्वारा कॉरपोरेट जगत को कर–रियायतों के तौर पर दी जाने वाली छह लाख करोड़ रूपए की सालाना राशि का करीब बीस फीसद ही है।

आज अपने सकल घरेलू उत्पाद का लगभग बीस प्रतिशत ही करों के रूप में सरकार के पास आता है, जबकि विकसित देशों में लगभग पचास प्रतिशत हिस्सा करों के तौर पर सरकारी खजाने में आता है। सरकार अब भी इस सच को स्वीकार नहीं कर रही है और उन्हें करों में छूट दिए जा रही है, जिसका कोई औचित्य नही है। दूसरी ओर कहा यह जाता है कि भूख से मुक्ति के कानून पर खर्च करने के लिए पैसा नहीं है।

प्रस्तावित विधेयक को लागू करने के लिए हर साल छह से साढे छह करोड टन अनाज की जरुरत पडेगी। यह ठीक है कि मौजूदा उत्पादन और ब्फर स्टाक मिलाकर अगले दो तीन साल तक भले कोई समस्या न आए लेकिन सवाल दूरगामी असर का है। देश की तमाम सहकारी संस्थाओं का मानना हैकि अनाज का भंडारण और वितरण प्रणाली दुरुस्त किए बिना खाध सुरक्षा कानून लाने का फैसला किसानो के साथ–साथ देश के लिए भी घातक सिद्ध हो सकता है। खाद की कमी और असमान छूती कोमतें आने वाले वर्षो में खाद्यान्न उत्पादन को प्रभावित कर सकती है। ऐसे हालात में खाध सुरक्षा योजना के लिए आयात पर निर्भरता बढेगी ओर इससे घरेलू और विदेशी.दोनो तरह के विचौलियों को फायदा होगा। सवाल हैकि आने वाले समय में सरकार खाध सुरक्षा के लिए अनाज कहा से मुहैया कराएगी।

पीडीएस यानी सार्वजनिक वितरण प्रणाली में जो खामिया है उन्हें बताने की शायद ही जरुरत है।हर किसी को पता हैकि सरकार जिस तंत्र को खाध सुरक्षा के अहम माध्यम के तौर पर देख रही है. वह कितना कामयाब है। पीडीएस को लेकर सरकार जा भी दावा करे .यही सच है कि गरोबों के अनाज की व्याापक कालाबाजारी हो रही है। यह कोई नई बात नही है। पीडीएस का अनाज राज्य के गोदामों तक तो पहूॅच जाता है.लेकिन यहॉसे राशन की दुकानों तक नही पहूॅच पाता ।सार्वजनिक वितरण प्रणाली में भ्रष्टाचार.कालाबजारी और 'लीकेज'हमेशा से था.लेकिन पिछले कई वर्षो में इसकी खामियॉ कई गुना बढ़ गई है। इसलिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली को दुरुस्त किए बिना इस कार्यक्रम कों कामयाब नही बनाया जा सकता । प्रस्तावित कानून को लागू करने के लिए अन्न की उपलब्धता बढाने के साथ–साथ यह भी देखना जरुरी होगा कि वह आम लोगों तक पहुॅच रहा है या नही इसलिए हमें एक ऐसी व्यवस्था पर जोर देना होगा जो अनाज को जरुरतमंद लोगो तक समय रहते पहुॅचा सके । इसके लिए जरुरी है कि सरकारी तंत्र अपनी व्यवस्था को तर्कसंगत और प्रभावी बनाए । यह तभी हो पाएगा जब यह सरकार की प्राथमिकता में शामिल हो ।खाध सुरक्षा विधेयक लाना एक अच्छा फैसला हो सकता है.लेकिन इसका समय गलत चुना गया है। अगले साल आम चुनाव होने है.लिहाजा इसे वोट जुटाने की यूपीए सरकार की कवायद के तौर पर देखा जा रहा है। दूसरें इस विधेयक को लाने का फैसला ऐसे समय हुआ है जब अर्थव्यवस्था लचर हालत में है फिर इसमें काफी कुछ राज्यों पर छोड़ दिया गया है। इसलिए इसके पुख्ता तौर पर लागू होने मे अड़चनें आ सकती है।बेहतर होता कि यूपीए सरकार अपने दूसरे कार्यकाल के पहले ही दौर में इस विधेयक को लागू करवा लेती। अब जब इसे लागू करना है तो इसके लाभाथियों के चयन में सावधनी बरतनी होगी ।यह अच्छी बात हैकि विधेयक में अनाज की कीमतें बहुत कम रखी गई है। मगर अनाज की मात्रा कम कर दी गई है जिससे जरुरत का शेष अनाज उॅची कीमत पर खुले बाजार से खरीदना होगा।इस विधेयक में जो प्रवधान है वे भुखमरी के प्रावधान हैं वे भुखमरी के तात्कालिक कारणों को छूते है पर मूल सवालों को नजर अंदाज करतें है।

समीक्षा :– आपका पूरा लेख पढ़कर ऐसा लगा जैसे आपने कुछ भी लिखने के उद्देश्य से इस कानून की समीक्षा की है। यह कहना गलत है कि सुप्रीम कोर्ट ने प्रति व्यक्ति सात किलो अनाज देने का निर्देश दिया था और सरकार ने पांच की व्यवस्था की। सच बात यह है कि सुप्रीम कोर्ट को ऐसा निर्देश देने का अधिकार ही नहीं है और अधिकार विहीन निर्देश का प्रभाव शून्य होता है। आपने ही लिखा है कि वर्तमान समय में भारत की अर्थव्यवस्था खराब दौर से गुजर रही है। अथवा सरकार को इसके लिये बीस तीस हजार करोड रूपया अतिरिक्त खर्च करना होाग जो कठिन है। ऐसे समय में पांच किलो को सात करने का आपका सुझाव कैसे उचित है?

आपने लिखा कि भारत की एक तिहाई आबादी भूखी और कुपोषित है। आपने कई जगह भूखे पेट या एक वक्त के भोजन का जिक्र किया ह। यह असत्य है। यह भी असत्य है कि इस योजना के बाद भी भारत की सतहत्तर प्रतिशत आबादी को अपनी आय का सत्तर प्रतिशत हिस्सा केवल भोजन पर खर्च करना पड़ेगा। ये सब आंकड़े हवाई दिखते हैं। भारत की आधी आबादी कुपोषित है यह सही है किन्तु भूखे पेट सोती है या एक टाइम ही खाती है यह सही नहीं है। वर्तमान समय में एक मजदूर को एक दिन की मजदूरी के रूप में न्यूनतम छ किलो अनाज प्राप्त है। खाद्य सुरक्षा विधेयक तो अतिरिक्त है। मैं नहीं समझता कि आपके आकड़े कहां से प्राप्त हैं। नरेगा न छ किलो की मात्रा को और बढ़ाया ही है।

मेरा आपसे निवेदन है कि सरकार की आलोचना करने के लिये हवाई तर्कों से बचना चाहिये।

5 राजेश सेठिया, बैगलोर कर्नाटक

विचार–रात्रि चिंतन के समय कुछ सुनहरे द्रश्य मनोमस्तिषक में उंत्पन्न हुए और मै इस नतीजे पर पहुॅचा कि यह राजनैतिक क्रांति पूरी तरह से सफल होगी । पहले चरण के रुप में दिल्ली विधान सभा चुनाव के तीन चौथाई बहुमत के साथ आम आदमी पार्टी की सरकार बनेगी। आम आदमी पार्टी की दिल्ली सरकार की कार्यप्रणाली तथा निर्णयों की वजह से चंद महीनों में ही केजरीवाल जी तथा आम आदमी कें पक्ष में एक देशव्यापी लहर का निर्माण हागा तथा लहर 2014 के लोकसभा चुनाव म बाकी की सभी पार्टियों को ध्वस्त कर देगी तथा केंद्र में आम आदमी पार्टी की सरकार स्पष्ट बहुमत के साथ बनेगी –याने की यह क्रांति पूरी तरह से सफल होगी । इस सुनहरे दृश्य के बाद मेरा चैतन कुछ और आगे बड़ा –मन में क्राति की सफलता के बाद की 'सार्थकता' के प्रश्न उत्पन्न होते चले गये। एक संभावित अनिष्ट की आशंका ने मेरे मन को झिझोंड़ कर रख दिया –मेरा मन व्यथित होता चला गया । इस व्यथा की पराकाष्ठा के साथ चिंतन कुछ और आगे बढा ।मन की व्यथा पर नियंत्रण करा तथा चिंतन की दिशा समाधान की तरफ बढाई । मन में प्रेरणा उत्पन्न हुई कि अंतर्द्वद तथा सुझावों कों उन क्रांति –वीरों के सामने रख दूॅ जो निकट भविष्य मे हिन्दूस्तान की एक नई इबारत लिख सकते है।मै आप सभी का ध्यान हिन्दुस्तान के इतिहास को उन दो क्रांतियों की तरफ आकर्षित करना चाहता हूॅ जो सफल होने के बावजूद सार्थक नही हो सकी ।पहली असफल क्रांति थी –हमारी आजादी की दूसरी लड़ाई –जिसके परिणास्वरुप स्वतंत्र भारत का निर्माण हुआ –क्रांति सफल हुई लेंकिन ''सार्थक '' नही हो पायी –जिस पार्टी के नेतृत्व मे यह लड़ाई जीती थी वही पार्टी हमारे राष्ट्रकी दुर्दशा का सबसे बड़ा कारण बनो ।आखिर क्यों –"

दूसरी सफल क्रांति थी –जयप्रकाश नारायण जी के नेतृत्व में 1977 की जनता क्रांति –इंदिरा जी का पतन हुआ और जनता सरकार का गठन हुआ । यह क्रांति भी सफल हुई लेकिन ''सार्थक''नही हो पाई –आखिर क्यों–इन दोनों बड़ी घटनाओं का राजनेतिक विश्लेषण कई तरह से किया जा सकता है–लेकिन मेरी दृष्टि में किसी भी क्रांति की सफलता तथा सार्थकता कुछ मूल तत्वों पर आधारित होती है–पहला मूल तत्व है–क्रांति का आधार (विरोधात्मक या सकारात्मक) तथा दूसरा मूल तत्व है–क्रांति के बाद की सत्ता हेतु जनप्रतिनिधियों का चयन । दोंनो ही क्रांतियो में यह आधार सिर्फ विरोधात्मक था–देशहित की भावना से जुड़ी होनें के बावजूद ये क्रातियॉ सिर्फ नकारात्मक थी (स्वतंत्रता की लड़ाई के समय गॉधी जी के सकारात्मक विचारों को मूर्त रुप नही दिया जा सका क्याकि अंतिम वर्षो में उनकी पकड़ ढीली पड़चुकी थी) जिनको नकारने के उद्देश्य से ये क्रांतिया हुई उन्हे हमने नकार दिया –दोनों बार क्रांतिया सफल हो गयी –लेकिन इन दॉनो ही क्रांतियो की ''बुनियाद ''में सकारात्मक विचारों की कमी थी –यानी इस राष्ट्र को क्या दिशा दी जाए इस प्रश्न को क्रांति की सफलता के बाद के लिए छोड़ दिया गया था–यानी पूरी बिल्ड़िग पुरानी नीव पर खड़ी करके बाद में नीव बदल देने की हास्यास्पद कल्पना करी थी –परिणाम हमारे सामने है–हम आज भी अॅग्रेजियत तथा कांग्रेसियत के रंग सें सराबोर है। जापान का उदाहरण आपके सामने रखना चाहूॅगा –1945क विध्वंस के बाद उनके सामने कोई ऐसा तत्व नही था जिसको वे उखाड़ने का सोचते –वहॉ भी क्रांति हुई थी –एक ' शुध्द सकारात्मक क्रांति –पुनर्निमाण के जुनून की क्रांति –और इस क्रांति की साथकता हमारे सामनें है। मेरे

विचार से बुराई के विरोध के आधार पर होन वाली क्राति सफल तो हो सकती है लेकिन उसे ''सार्थक ''बनाने के लिए सकारात्मकता का होना भी जरुरी है। मै मानता हूँ कि हमारे देश की वर्तमान राजनैतिक परिस्थितियों में भ्रष्टाचार का विरोध इस नई क्रांति का मुख्य आधार है और क्रांति को सफलता के लिए यह जरुरी भी है –लेकिन इस बार हमें क्रांति को ''सार्थक ''भी बनाना है–और इसके लिए हमें इस नई इमारत को खड़ी करनें कें पहले ही सकारात्मक विचारों की ठोस बुनियाद बनानी होगी –सदाचार', राष्ट्र धर्म ,आदर्शवाद ,त्याग,नैतिकता ,चारित्रिक बल जैसे विषयों पर आधारित विचारों को जन –जन तक पहुचाना होगा । साथ ही हमारे विकास के बुनियादी ढॉचे कों भी रेंखाकित करना होगा। पिछली दोनों कांतियों की सफलता के बाद सत्ता की बागड़ोर जिन लोगो ने सम्हाली ,उनका स्वंय का कद इतना विशाल नही था कि वे अपना सर्वस्व न्योछावर करने की भावना से राष्ट्र सेवा कर पाते –मतलब साफ है कि सत्ता गलत हाथो में जाने के कारण ये क्रातियॉ ''सार्थक ''नही हो पाई।मुझे यह प्रतीत हो रहा है कि टीम केजरीवाल स्वच्छ राजनीति के लिए प्रतिबद्ध है तथा उम्मीदवारो के चयन की प्रक्रिया भी लोकतात्रिक रखी है,फिर भी मुझे इस प्रकिया में कुछ मूलभूत सुधार करने की जरुरत महसूस हो रही है।इसलिए मै ''अग्रिम माफी ''के साथ विनय पूर्वक टीम केजरीवाल को आगाह करना चाहता हूँकि–इस मामले मे चूक मत कर जाना –वरना यह जनप्रतिनिधियों की बेईमानी तथा राजनेतिक महत्वाकाक्षा हमारी दुर्गति के बड़े कारण रहे है।अब आम जनता पार्टी के लिए हमें ऐसे उम्मीदवारों की जरुरत है जो ईमानदार हों ,राष्ट्र–भक्त हों तथा अन्य विशेषताओं से परिपूर्ण विशाल कद के स्वामी हों। मेरा मानना है कि ऐसे जनप्रतिनिधि ही देश की सच्ची सेवा कर सकते है। इस विशाल देश में ऐसे सदाचारी व्यक्तियों की कोई कमी नही है–जरुरत सिर्फ उन्हे खोजने की है ।खोजने की जरुरत इसलिए है ,क्योंकि पूरी तरह से आदर्श तथा सदाचारी व्यक्ति आज निष्क्रिय बने हुए है –वे उनकी स्वयं की उम्मीदवारी की पेशकश भी नही करेंगें –और दूसरे लोग भी उनकी उम्मीदवारी को प्रस्तावित नही करेंगे। लेकिन अगर हम उन्हें ''खोज ''पाते है तो यह इस क्रांति की सार्थकता की दिशा में एक ठोस कदम होगा –ऐसा मेरा मानना है। जिस तरह से भ्रष्टाचार उपर से नीचे की तरफ बहता है उसी तरह से सदाचार भी उपर से नीचे की तरफ बहता है । अगर हमने हमारी विधायिकाओ को सदाचारी व्यक्तियों से भर दिया तो इस देश में सदाचार की ऐसी गंगा बहेगी जिसमें नहाकर आम आदमी पर वर्षो से चढ़ी हुई मलिनता की पर्त धुलने लगेगी तथा हमारी कांति सही अर्थो में सार्थक होगी।टीम केजरीवाल सदाचारी होने के साथ–साथ जनता की नब्ज टटोलन में तथा राजनैतिक प्रबंधन में भी दक्ष है। अगर ठान लिया आपने तो ऐसे उम्मीदवारों को ''खोज'' भी लेंगें –ऐसा मुझे यकीन है। यह क्रांति पूरी तरह से सार्थक हो इसी इच्छा के वशीभूत होकर मैने इतना सब कुछ लिख दिया । मुझे उम्मीद है की इस पर गहन चिंतन तथा गंभीर विचार विमर्श करके जरुरी कदम उठाऍगें। क्रांति –वीरों कों राह दिखाने की कोशिश कर रहा हूँ –इस गुस्ताखी के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।

उत्तर :– आपने पत्र के प्रारंभ में जो संभावना व्यक्त की वह सच होगी या गलत यह मेरी समीक्षा का विषय नहीं। गांधी की क्रांति का पहला चरण पूरा हुआ। भारत अहिंसक तरीके से स्वतंत्र हुआ। किन्तु गांधी के जाते ही दूसरा चरण विपरीत राह पर भटक गया। गांधी के बाद जो लोग सत्ता में आये उनकी नीयत ठीक थी मार्ग गलत। उनकी सबसे बड़ी भूल थी कि वे स्वयं को चरित्रवान और अन्यों को कमजोर मानत थे। गांधी जी समाज को मालिक और सत्ता को मैनेजर मानते थे। इनके बाद आये लोगों ने समाज को बीमार और स्वयं को डाक्टर मान लिया। आपने अन्तिम वाक्यों में जो सलाह दी है वह सलाह समाधान न होकर समस्या है। स्वतंत्रता के बाद जनप्रतिनिधि बेइमान नहीं थे। जन प्रतिनिधियों ने चरित्रवान होने के घमण्ड में समाज की स्वतंत्रता में अधिकाधिक हस्तक्षेप किया। सत्ता जिस गति से इन चरित्रवानों के पास इकट्ठी हुई उसी गति से चरित्रहीनों का प्रवेश राजनीति में बढ़ता गया। आप फिर वही सलाह दे रहे हो।

एक सामान्य सा सिद्धान्त है कि अधिकार सम्पन्न चरित्रवान की अपेक्षा अधिकार विहीन चरित्रहीन से खतरा कम है क्योंकि अधिकार सम्पन्न चरित्रवान की नीयत कभी भी बदल सकती है किन्तु अधिकार विहीन चरित्रहीन हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। चाहे अरविन्द हों या अन्ना हजारे। आप जैसों की सलाह से दूर रहें। आपको यदि वहॉ जाकर सत्ता सुधारनी है तो चरित्रवान खोजते रहिये। जब तक सत्ता वहॉ है तब तक कोई चरित्रवान जा ही नहीं सकता। आप तो एक और सिर्फ एक ही कसौटी रखिये कि हमारा उम्मीदवार संसद में जाकर संसद के अधिकार, दायित्व तथा हस्तक्षेप बहुत कम करके तीन माह में ही नये चुनाव करा देगा। कोई उम्मीदवार चरित्रवान है या चरित्रहीन इसकी अपेक्षा यह बात ज्यादा महत्व की है कि उसे सत्ता का मोह नहीं है। यदि आपको विश्वास हो जाये कि संविधान संशोधन के बाद आपका उम्मीदवार सत्ता छोड़ने में देर नहीं करेगा तो आप बिना चरित्र की परीक्षा लिये उसे उम्मीदवार बनाइये। यदि शारीरिक रूप से कमजोर, अपंग, मूर्ख, मरणासन्न उम्मीदवार हों तो ज्यादा अच्छा होगा क्योंकि उन्हें तो वहां जाकर सिर्फ संविधान संशोधन पर मुहर लगानी है।

हर चरित्रवान एक बीमारी से ग्रसित होता है कि वह स्वयं को तो उपर वालों से स्वतंत्र देखना चाहता है किन्तु अपने से नीचे वालों को स्वतंत्रता देना नहीं चाहता। आप यदि चरित्र को कसौटी बना देंगे तो फिर से वही भूल होगी जो गांधी के बाद हुई। अतः घिसी पिटी सलाह देकर अरविन्द केजरीवाल टीम को चरित्र की राह से बचाकर लोक स्वराज्य की राह बताने की जरूरत है।

अगर भारत के लोग सदाचारी हो जायें तो सदाचार की गंगा बहेगी। ऐसी बातों का अर्थ क्या है? अगर हो गया तो? यह अगर कभी पूरा नहीं होगा। न सदाचारी लोग जा पायेंगे न गंगा बहेगी। मैं इसके विपरीत सोचता हूँ कि अगर संसद के अधिकार हस्तक्षेप दायित्व न्यूनतम हो जायें तो चरित्र हीनों का राजनीति से आकर्षण घटेगा और चरित्रवानों का प्रवेश संभव हो सकता है। इस दिशा में सलाह देने की कृपा करें।

6 श्री सिद्धार्थ शर्मा बंगलोर

विचार :—कांग्रेस उपाध्यक्ष राहुल गांधी ने भारतीय उधोग संघ की सभा मे यह कहकर सबको चौका दिया कि भारत की समस्याओं का समाधान व्यक्तियों से नही बल्कि एक नई व्यवस्था के माध्यम से संभव है। जिसमे सत्ता सीधे जनता के पास हो। उन्होने जो वाक्य का प्रयोग किया वह दिलचस्प है पावर टु ए बिलियन पिपल।

प्रश्न उठता है कि क्या यह सिद्धान्त भारत मे पहली बार बाचा गया है? गांधी का हिन्द स्वराज्य हो जय प्रकाश नारायण का ''सत्ता के उल्टे पिरामिड'' को सीधा करना हो, सर्वोदयी प्रो0 ठाकुर दास बंग द्वारा प्रणीत लोक स्वराज्य हो, अन्ना हजारे की जनसंसद सर्वोच्च हो या हाल ही मे गठित आम आदमी पार्टी की "स्वराज'' अवधारणा , पिछले 66 वर्षो से सत्ता सीधे जनता के हाथो मे का सिद्धान्त तो हमशा भारत मे उठता ही रहा, भले अलग अलग कालखंडो मे उसे मिले जनसमर्थन के अनुपात मे अंतर हो।

सवाल उठता है कि कांग्रेस आज यह नारा क्यो बुलंद कर रही है? स्वतंत्र भारत मे 3/4 काल तो कांग्रेस ही सत्ता मे रही। तो उसने अब तक इस नारे को कानूनी जामा क्यो नही पहनाया? कांग्रेस मे भाजपा से अधिक कुशाग्र रणनीतिकार है। आंदोलन अन्ना अरविन्द आम आदमी पार्टी को मिल रहे आशातीत जनसमर्थन मे कांग्रेस कदाचित इस निर्णय पर पहुंच गयी है कि अगला आम चुनाव विकाश करिश्माई व्यक्तित्व मंहगांई आदि के मुद्दो पर नही बल्कि लोकतंत्र की असली परिभाषा के मुद्दे पर लडा जायगा। । क्योकि भारत का आम नागरिक अब प्रतिनिधि लोकतंत्र के छलावे और असलो लोकतंत्र रूपी लोक स्वराज के बीच का अंतर का स्पष्ट समझ रहा है और उसने स्वराज की मंजिल की और कूच कर दिया है।

भाजपा के मुकाबले कांग्रेस इस जन स्खलन को भांप चुकी है और आम आदमी को उस मंजिल से भटकाने हेतु आश्वासन का धोखा देने को पूरी योजना बना रही है। इसीलिये तो उसने अन्ना अरविन्द आम आदमी के लोक स्वराज सिद्धान्त को हाइजैक कर लिया है।

इसका कारण यह है की अब अगले आम चुनाव मे स्वतंत्र भारत मे पहली बार लोक एंव तंत्र के बीच स्पष्ट ध्रुवीकरण होगा और ऐसे स्पष्ट ध्रुवीकरण की स्थिति मे तंत्र का लोक के हाथो परास्त होना तय है। बस इसी ध्रुवीकरण को टालने के लिये ही कांग्रेस या सहभागी लोकतंत्र के मूलभत पावर टु ए बिलियन पिपल को अपना कहकर परोसने की फिराक मे है।

लोक स्वराज रूपी उगते सूज को नारा रूपी काली पट्टी से भारत के लोक की आंख पर बांधने के कांग्रेंस के इस प्रयास को अंकुरित होने से पहले हो नोचना होगा तभी लोक /तंत्र का ध्रुवीकरण कालपुरूष 2014 की मांग बना रहेगा।

समीक्षा :– अब तक यह दिख रहा था कि टीम अन्ना हजारे अरविन्द केजरीवाल का मुख्य मुकाबला किसी एक दल से न होकर एक विचारधारा से होगा जिसमें कांग्रेस, भाजपा, साम्यवादी आदि सब एक ओर होते जायेंगे। अब राहुल गांधो की सोच ने समीकरण बदल कर रख दिये हैं। अब भारतीय जनता पार्टी टकराव से बाहर हो सकती है और मुख्य मुकाबला कांग्रेस और टीम अरविन्द के बीच संभव है। यदि आप टीम अरविन्द केजरीवाल के पक्ष के हों तो राहुल का कथन आपके लिये चिन्ता का कारण है अन्यथा यदि अन्य काई दल देश काल परिस्थिति को देखकर लोक स्वराज्य की दिशा पकड़ता है तो हमें चिन्तित न होकर उसका स्वागत करना चाहिये। अब स्पष्ट दिखता है कि राहुल गांधी के कथन के बाद भाजपा को भी दिशा बदलनी होगी अन्यथा भाजपा दौड़ से भी बाहर हो सकती है। राहुल गांधी ने यह बयान देकर भारत की सम्पूर्ण राजनीति की दिशा बदल दी है। राहुल रहित कांग्रेस के इतिहास को राहुल के साथ जोड़कर राहुल की समीक्षा करना निष्पक्ष आकलन नहीं होगा।